Anusanadhan: A Multidisciplinary International Journal (In Hindi)
Volume 8, Issue 1&2 - 2023, Pg. No. 1-6
Peer Reviewed Journal

Research Article

जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में राष्ट्रवाद

Ambikesh Dubey

शोधार्थी, भारतीय भाषा केन्द्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली.

I N F O

E-mail Id:
ambikeshdubey123@gmail.com
Orcid Id:
https://orcid.org/0009-0003-3003-7197

Date of Submission: 2023-05-05
Date of Acceptance: 2023-06-20

सारांश

प्रस्तुत शोध आलेख ''जयशंकर प्रसाद जी की रचनाओं में राष्ट्रवाद'' की बात करता है, और राष्ट्रहित में भूमंडलीकरण वैश्वीकरण इत्यादि विभिन्न बिंदुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास करता है ।

मुख्य बिंदु: राष्ट्रवाद, वैश्वीकरण, विमर्श, भूमंडलीकरण आदि।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध आलेख में द्वितीयक स्रोतों का प्रयोग किया गया है व जिसमें विभिन्न पुस्तकें व अखबार शामिल हैं व आजकल 'राष्ट्रवाद' का सवाल पुनः केन्द्र में आ गया हैं। इस बहस के प्रसंग में पहली बात यह कि 'राष्ट्रवाद' का कोई एक रूप कभी प्रचलन में नहीं रहा। आम जनता में उसके कई रूप प्रचलन में रहे हैं। स्वाधीनता संग्राम के दौरान 'राष्ट्रवाद' के वैविध्यपूर्ण रूपों को समाज में सक्रिय देखते हैं। यही स्थिति स्वतंत्र भारत में भी रही है।

लोकतंत्र के विकास की प्रक्रिया में राष्ट्रवाद सामान्यतौर पर एक समानान्तर विचारधारा के रूप में हमेशा सक्रिय रहा है। मुश्किल उन्हें है जो राष्ट्रवाद को लोकतंत्र की स्थापना के साथ हाशिए की विचारधारा मानकर चल रहे थे।

राष्ट्रवाद स्वभावतः निजी अंतर्वस्तु पर निर्भर नहीं होता अपितु हमेशा अन्य विचारधारा के कंधों पर सवार रहता है। राष्ट्रवाद के अपने पैर नहीं होते। यह आत्मनिर्भर विचारधारा नहीं है। आधुनिककाल आने के साथ ही 'राष्ट्रवाद' के विभिन्न रूप दिखाई देते हैं, उनमें यह समाजवाद, उदारतावाद, अनुदारवाद यहां तक कि अराजकतावादी विचारधारा के कंधों पर सवार होकर आया है। राष्ट्रवाद के लिए कोई भी अछूत नहीं है, वह साम्प्रदायिक, पृथकतावादी, आतंकी विचारधाराओं के साथ भी सामंजस्य बिठाकर चलता रहा है। इसलिए 'राश्ट्रवाद' पर विचार करते समय उसका 'संदर्भ' और 'सांगठनिक–वैचारिक आधार' जरूर देखा जाना चाहिए, क्योंकि वही उसकी भूमिका का निर्धारक तत्व है।

आधुनिक हिंदी–साहित्य के प्रमुख साहित्यकारों में जयशंकर प्रसाद अग्रगण्य है, मूर्धन्य कवि होने के साथ प्रसादजी ने गद्य में भी लेखनी चलाकर नाटकों के क्षेत्र में युगांतर स्थापित कर दिया। अभी तक जो भी नाटक लिखे गये उनमें राष्ट्रीयता तो थी, किन्तु प्रसाद जी के नाटकों में अधिक परिमाण में है। सबसे पहले हिंदी साहित्य में भारतेंदु जी ने और बाद में प्रसाद जी ने नवीन प्रयोग किये। उन्होंने राष्ट्रीयता को नाटक का मुख्य तत्व मानते हुए भारतीय इतिहास के गौरवमय अतीत से कथानक लेकर नाटकों का प्रणयन किया जो हर दृष्टि से अद्भुत है।

राष्ट्र एक ऐसी चेतना है जो मनुष्य में इच्छा शक्ति और संवेदना उत्पन्न होती है।

चेतना अवलोकन ही नहीं उनकी परख तथा मूल्यांकन भी करती है। राष्ट्रीयता के निर्माण में मुख्य रूप से भौगोलिक एवं सांस्कृतिक एकता विद्यमान रहती है और इसका स्थूल और सुदृढ़ आधार देश की भूमि ही है। हिंदी साहित्य में राष्ट्रीय चेतना का जो स्वरूप हमारे सामने है। वह आधुनिक युग की देन है।

राष्ट्रीय चेतना मनुष्य के मन का परिष्कार करती है।

प्रसाद जी ने अपने नाटकों में प्रेम–भावना के साथ–साथ अतीत के गौरवगान द्वारा देशवासियों के प्रति प्रेम उत्पन्न करके लगातार संघर्ष की भूमिका बाँध दी है।

जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक 'चन्द्रगुप्त' के प्रसिद्ध गीत 'अरुण यह मधुमय देश हमारा, जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा' में देश के प्रति आत्मभाव को ही अभिव्यक्ति मिली है।

राष्ट्रीयता का एक पक्ष है अपने अतीत की स्मृति। अतीत की स्मृति आत्मस्मृति है। आत्मस्मरण जीवन है और आत्मविस्मृति मृत्यु। निर्मल वर्मा ठीक ही लिखते हैं कि कोई भी जाति संकट की घड़ी में अपने अतीत, अपनी जड़ों को टटोलती है। संकट की घड़ी आत्ममंथन की घड़ी है और सही आत्ममंथन हमेशा अतीत में लिये

Copyright (c) 2023: Author(s). Advanced Research Publications

गये फैसलों के आसपास होता है...। जिस तरह एक व्यक्ति अपनी स्मृति में दुनिया को परखता है, उसी तरह एक जाति अपनी परम्परा की आंखों से यथार्थ को छानती है। जो लोग अतीत की स्मृति या अतीत के मूल्यांकन को अतीत के प्रति सम्मोहन का दर्जा देते हैं, निर्मल वर्मा उसका प्रत्याख्यान करते हैं– 'अतीत का बोध अतीत के प्रति सम्मोहन से बहुत भिन्न है। विगत के प्रति सम्मोहन उसी समय होता है जब हम परम्परा से विगलित हो जाते हैं... परम्परा का रिश्ता स्मृति से है सम्मोहन से नहीं।'

जयशंकर प्रसाद ने 'चन्द्रगुप्त' और 'स्कंदगुप्त' नाटक में स्वर्णिम अतीत को वर्तमान के लिए प्रेरणाप्रद बताया है। प्रसाद की निम्नांकित पंक्तियां गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाती हैं और वर्तमान में प्रेरणा भी देती हैं–

- वही है रक्त वही है देह वही साहस वैसा ही ज्ञान।
- वही है शांति वही है शक्ति वही हम दिव्य आर्य संतान।।
- जियें तो सदा उसी के लिए यही अभिमान रहे यह हर्ष।
- निछावर कर दें हम सर्वस्व हमारा प्यारा भारतवर्ष।।

अपनी संस्कृति के प्रति गौरवबोध वस्तुतः राष्ट्रीय अस्मिता का हिस्सा है और राष्ट्रीय अस्मिता राष्ट्रबोध का अभिन्न हिस्सा है।

जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक 'चन्द्रगुप्त' के प्रसिद्ध गीत 'अरुण यह मधुमय देश हमारा जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा' में देश के प्रति आत्मभाव को ही अभिव्यक्ति मिली है।

- इसी प्रकार... हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
- स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती
- अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो,
- प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो!
- असंख्य कीर्ति–रश्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह–सी
- सपूत मातृभूमि के– रुको न शूर साहसी!
- अराति सैन्य सिंधु में, सुवाड़वाग्नि से जलो,
- प्रवीर हो जयी बनो – बढ़े चलो, बढ़े चलो!

कवि द्वारा स्वर्णिम अतीत को सामने रखकर मानों एक सोये हुए देश को जागने की प्रेरणा दी जा रही थी।

वैदिक काल से ही राष्ट्र शब्द का प्रयोग होता रहा है। राष्ट्र की परिभाषाएं समय–समय पर बदलती रही हैं, किन्तु राष्ट्र और राष्ट्रीयता का भाव गुलामी के दौरान अधिक पनपा। जो साहित्य के माध्यम से हमारे समक्ष आया जिसके द्वारा राष्ट्रीय चेतना का संचार हुआ।

साहित्य का मनुष्य से शाश्वत संबंध है। साहित्य सामुदायिक विकास में सहायक होता है और सामुदायिक भावना राष्ट्रीय चेतना का अंग है। समाज का राष्ट्र से बहुत गहरा और सीधा संबंध है। संस्कारित समाज की अपनी एक विशिष्ट जीवन शैली होती है। जिसका संबंध सीधा राष्ट्र से होता है जो इस रूप में सीधे समाज को प्रभावित करती है.

प्रसाद जी ने देशवासियों में आत्मगौरव और राष्ट्रीय भावना जगाने के लिए भारत के स्वर्णिम अतीत को नाटकों का विषय बनाया। प्रसाद जी ने एक दर्जन नाटक लिखकर हिंदी नाटक साहित्य को समृद्ध किया। 'सज्जन','कल्याणी परिणय', 'करुणालय', 'प्रायश्चति', 'राज्यश्री', 'विशाख', 'अजातशत्रु', 'जनमेजय का नाग यज्ञ', 'स्कंदगुप्त', 'एक घूंट', 'कामना', 'चन्द्रगुप्त', तथा 'ध्रुवस्वामिनी' जैसे नाटक लिखकर हिंदी साहित्य का गौरव बढाया। इनके नाटकों में ऐतिहासिक, सांस्कृतिक चेतना, इतिहास और कल्पना का सुंदर सामंजस्य दार्शनिक गंभीरता और साथ ही काव्यात्मक सरसता, वीरता और साहस व प्रेम का रोमानी संघर्षपूर्ण वातावरण, देशकाल का सजीव चित्रण आदि विशेषतायें इनके नाटकों में दृश्टव्य होती है।

प्रसाद जी के नाटकों की प्रशंसा अनेक विद्वानों ने की। डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है कि प्रसाद की ट्रेजडी की भावना, उनकी सांस्कृतिक पुनरुथान की चेतना, उनके महान कोमल चरित्र, उनके विराट मधुर दृश्य, उनका काव्य स्पर्श हिंदी में तो अद्वितीय है ही, अन्य भाषाओं और नाटकों की तुलना में भी उसकी ज्योति मलिन नहीं पड़ सकती है।'

बच्चन सिंह की धारणा है कि प्रसाद जी को इतिहास की अप्रतिहत परिवर्तन शीलता में अटूट विश्वास था। अपनी मर्मस्पर्शिनी प्रतिभा द्वारा प्रसाद जी ने समझ लिया कि अंतर्विरोधी राजकीय सत्ता, सामन्तीय परिपाटी एवं साम्राज्यवाद की दीवारें टूट रही हैं। नवीन मानवतावादी भावना उग रही है। प्रसाद जी ने अपने नाटकों की अन्य विशेषताओं के साथ उनके नाटकों में अपने युग की समस्या का प्रतिबिम्ब भी है। प्रसाद जी की राष्ट्रीयता के सन्दर्भ में बच्चन सिंह जी कहते हैं कि इनकी राष्ट्रीयता राजाओं और सरदारों तक सीमित नहीं हैं, वह ऐसी राष्ट्रव्यापी चेतना है जो देश के प्रत्येक व्यक्ति को अपने में समाहित कर लेती है । दूसरी, इनकी राष्ट्रीयता में विमैत्री समन्वित है । यही कारण है कि स्थान–स्थान पर मानव मैत्री का उद्‌घोष हुआ है।

अतः हम कह सकते है की भारतेंदु युग में जो नाटक रूप था, प्रसाद ने उसे परिष्कृत और प्रौढ़ता प्रदान की, प्रसाद के नाटकों में जो भावुकता, जो राष्ट्रीयता का पक्ष था और ऐतिहासिक परिवेश का जो जीवंत और व्यवस्थित निरूपण रहा वह प्रसादोत्तर सृजन में भी रहा। अध्येताओं का मत है कि प्रसाद के बाद जो नाटककार हुए, उनपर प्रसाद जी का प्रभाव भिन्न भिन्न रूप में परिलक्षित होता है।

प्रसाद जी ने अपने नाटकों के द्वारा भारत के गौरवशाली युगों को सजीव प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है, जिससे कि भारतवासियों में आत्मगौरव की भावना का संचार हो सके।

जगे हम, लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक।

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में नारियों की सहभागिता सुनिष्चित करने और राजनीतिक सक्रियता लाने हेतु महात्मा गांधी की भांति नाटककार जयशंकर प्रसाद ने यह स्पष्ट किया है कि नारियों को घर की चार दीवारी से बाहर लाना आवश्यक हैं। उन्होंने अपने नाटकों में आग से खेलने वाली राजनीतिक सूझबूझ से सम्पन्न अनेक नारियों का चित्रण किया है। चन्द्रगुप्त नाटक की 'अलका' वीर क्षत्राणी बनकर अपने स्वतंत्र नारी व्यक्तित्व का परिचय देती हैं। चन्द्रगुप्त और चाणक्य के साथ मिलकर देश की रक्षा के लिये वह नटी का रूप धारण करती है, पर्वतेश्वर के बंदीगृह में चाणक्य से

संकेत पाकर वह पर्वतेष्वर की प्रणयिनी बनने की राजनीति खेलती है।

नाटककार प्रसाद के नाटकों का मूल उद्देश्य सांस्कृतिक चेतना जागृत करना, नारी अस्मिता को स्थापित करना और राष्ट्रीय भावनाओं को जन–जन तक पहुँचाना रहा है ।

उन्होंने पारंपरिक मान्यताओं से पृथक राष्ट्रवादी सिद्धांतों की व्याख्या की हैं। नाटकों के नारी पात्रों के माध्यम से उन्होंने व्यापक रूप में राष्ट्रीय चेतना का संदेश दिया हैं। उनके सभी प्रमुख नाटकों में नारी के गौरवमय राष्ट्रीय स्वरूप के भव्य दर्शन होते हैं। 'चन्द्रगुप्त' नाटक की नारी पात्र 'अलका' सिल्यूकस के समक्ष अपने राष्ट्र प्रेम का परिचय देती हुई कहती है कि 'मेरा देश है, मेरे पहाड़ हैं, मेरी नदियाँ और जंगल हैं, इस भूमि के एक–एक परमाणु मेरे हैं और मेरे शरीर के एक–एक क्षुद्र अंष उन्हीं परमाणुओं से बने हैं।' 'स्कंदगुप्त' की जयमाला 'अजातशत्रु' की मल्लिका, 'चन्द्रगुप्त' की मालविका, 'स्कंदगुप्त' की रामा, देवसेना आदि में राष्ट्रीयता की भावना नस–नस में व्याप्त हैं। जातीय गौरव, राष्ट्रीय प्रेम और विश्व कल्याण की कामना को स्थापित करने में प्रसाद के नाटकों की नारियाँ उल्लेखनीय हैं।

अतः कह सकते हैं कि प्रसाद के नाटकों में आदर्श और मर्यादा के साथ–साथ देश भक्ति की डोर पकड़कर गतिमान होने वाली गौण नारी पात्रों में भी आम जनमानस को प्रभावित करने की विशेष क्षमता हैं।

भारतेंदु और प्रसाद युगीन मुख्य नाटकाकारों ने देशवासियों को प्रेरित करके नवजागरण के लिए जगाया। अपने नाटकों के पात्रों एवं संवादों से जनता में राष्ट्रीय चेतना का संचार किया। प्रायः इन नाटकों के चरित्र देश की आन, बान और शान की खातिर अपने प्राणों का बलिदान देते हुए नजर आते हैं। व्यक्ति बड़ा नहीं है, महान नहीं है बल्कि राष्ट्र महान है, का संदेश देते हुए इनके नाटकों में अतीत गौरव एवं व्यंग्य के चित्रण में राष्ट्रीय चेतना एवं देश भक्ति का स्वर प्रधान हैं।

अन्ततोगत्वा हम इसी निष्कर्श पर पहुँचते है कि प्रसादजी तथा उनके समकालीन नाटककारों ने जिस राष्ट्रीय चेतना को अपनी कृतियों में समाहित और प्रकाशित किया है, वह आदि कवि बाल्मीकि के जननी जन्म भूमिच.... स्वर्गादपि गरियसी .... का ही विस्तार है।

छायावादी कवियों में प्रसाद और निराला पर गांधी का कोई प्रभाव नहीं था, लेकिन पंतजी पर 1934 के बाद प्रभाव देखा जा सकता है। रामविलास शर्मा के अनुसार प्रसाद पर समाजवादी विचारधारा का धुंधला सा प्रभाव जरूर है। इस धुंधले प्रभाव का अर्थ है–किसानों के संगठन और उनके सामन्तविरोधी संघर्ष का बोध।

रामविलास शर्मा के अनुसार प्रसाद और गांधीजी के नजरिए में तीखा अंतर्विरोध देखना हो तो यह भी देखें कि गांधीवाद जहां प्राचीन भारतीय समाज में वर्ग संघर्ष अस्वीकार करता है, वहीं प्रसादजी ने राजा–प्रजा के रक्तमय संघर्ष का चित्रण पेश करके उसे स्वीकार किया है।

गांधीवाद निष्क्रिय प्रतिरोध की बात करता है स्वयं कष्ट सहकर अन्यायी के हृदय–परिवर्तन की बात करता है, वहीं प्रसादजी ने सक्रिय प्रतिरोध के आदर्श को पेश किया है। शस्त्र उठाकर आततायियों का विरोध करने का चित्र खींचा है। प्रसाद के पात्र सामाजिक संघर्ष में तटस्थ नहीं रहते। वे देश और जनता के प्रति सहानुभूति ही नहीं रखते अपितु संघर्ष में हिस्सा लेते हैं।

रामविलास शर्मा के अनुसार प्रसाद के 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में यह नीति सूत्र है कि क्रूर, नृशंस, देश की रक्षा करने में असमर्थ राजा वध्य है।

वहीं नंद दुलारे वाजपेयी के अनुसार जयशंकर प्रसाद का मूल दृष्टिकोण है 'अनाड़ी पुरूष की उद्धारक है। यदि इस बुनियादी नजरिए को ध्यान में रखें तो प्रसादजी का नया पाठ निर्मित होगा।

सवाल यह है क्या नारी संबंधी यह दृष्टिकोण आज के समय में समाज में मददगार होगा ? हमारा मानना है कि नारी को समाज की धुरी मानना,उसके जरिए ही परिवर्तन के तमाम कार्य संपन्न करना, प्रसादजी के साहित्य स्त्री पात्र बदलाव और उत्प्रेरणा के कारक बनकर सामने आते हैं।

जयशंकर प्रसाद को मन्दिर, फुलवारी और अखाड़ा ये तीन चीजें निजी तौर पर बहुत प्रिय थीं। इसके अलावा उनकी रचनाओं में व्यक्ति और राष्ट्र के अंतर्विरोधों के कई रूप नजर आते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार ञउनकी आरंभिक रचनाओं में अतीत के प्रति एक प्रकार की मोहकता और मादकता भरी आसक्ति मिलती है। उनके कई परवर्ती नाटकों में यह भाव स्पष्ट हुआ है।'

मुक्तिबोध का मानना है कि प्रसाद की खूबी है कि 'कवि कुछ कहना चाहता है,पर कह नहीं पाता', ''अन्य कवियों ने अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों को स्वच्छन्दता के साथ प्रकट किया, जबकि प्रसाद ने उन पर अंकुश रखा। एक प्रकार की झिझक और संकोच का भाव उनकी आंसू तक की सभी कविताओं में मिलता है। ऐसा लगता है कि कवि को भय है कि उसके मन में जो भाव उमड़ रहे हैं, जो वेदना संचित है वह यदि एकाएक अपने अनावृत्त रूप में प्रकट हो जाएगी तो पाठक उसकी कद्र नहीं कर सकेंगे।

कवि की धारणा है कि उसका पाठक अभी इस परिस्थिति में नहीं है कि उसके भावों को ठीक–ठीक समझ सके और सहानुभूति के साथ देख सके।'

मुक्तिबोध के अनुसार 'कामायनी में प्रधान हैं लेखक के जीवन निश्कर्ष और जीवन अनुभव, न कि कथावस्तु और पात्र। साधारणतः, कथावस्तु के भीतर पात्र अपने व्यक्तित्व–चरित्र का स्वतंत्र रूप से विकास किया करते हैं, किंतु कामायनी में पात्र और घटनाएँ लेखक की भावना के अधीन हैं। कथानक, घटनाएँ, पात्र आदि तो वे सुविधा रूप हैं, कि जो सुविधा रूप लेखक को अपने भाव प्रकट करने के लिए चाहिए। इसीलिए कामायनी में कथावस्तु फैण्टेसी के रूप में उपस्थित हुई है, और उस फैण्टेसी के माध्यम से लेखक आत्म–जीवन को और उस आत्म–जीवन में प्रतिबिम्बित जीवन–जगत् के बिम्बों को, और तत्संबंध में अपने चिन्तन को, अपने जीवन–निष्कर्षों को प्रकट कर रहा है। 'मुक्तिबोध के अनुसार' यह सर्वसम्मत तथ्य है कि कामायनी में जीवन समस्या है। वह जीवन समस्या है व्यक्तिवाद की समस्या

है। जो एक विशेष समाज एवं काल में विशेष प्रकार से उपस्थित हो सकती है। इसके साथ प्रसाद के व्यक्तित्व को मिलाकर देखना होगा।'

मुक्तिबोध के अनुसार जयशंकर प्रसाद का दर्शन 'एक उदार पूंजीवादी–व्यक्तिवादी दर्शन है, जो यदि एक मुँह से वर्ग–विषमता की निन्दा करता है तो दूसरे मुँह से वर्गातीत, समाजातीत व्यक्तिमूलक चेतना के आधार पर, समाज के वास्तविक द्वन्द्वों का वायवीय तथा काल्पनिक प्रत्याहार करते हुए 'अभेदानुभूति' के आनंद का ही संदेश देता है।'

मुक्तिबोध के अनुसार प्रसादजी की कामायनी में चित्रित सभ्यता समीक्षा के प्रधान तत्व हैं, '(1) वर्ग–भेद का विरोध और उसकी भर्त्सना, अहंकार की निन्दा–यह प्रसादजी की प्रगतिशील प्रवृत्ति है। (2) शाससकवर्ग की जनविरोधी, आतंकवादी नीतियों की तीव्र भर्त्सना – यह भी प्रगतिशील प्रवृत्ति है। (3) वर्ग–भेद का विरोध करते हुए भी मेहनतकशों के वर्गसंघर्ष का तिरस्कार – यह एक प्रतिक्रियावादी तत्व है। (4) वर्गहीन सामंजस्य और सामरस्य का वायवीय अमूर्त्त आदर असवाद, यह तत्व अपने अन्तिम अर्थों में इसलिए प्रतिक्रियावादी है कि (क) वर्ग–वैषम्य से वर्गहीनता तक पहुँचने के लिए उसके पास कोई उपाय नहीं, इस उपायहीनता का आदर्शीकरण है आदर्शवादी–रहस्यवादी विचारधाराय (ख) इस उपायहीनता का एक अनिवार्य निष्कर्ष यह भी है कि वर्तमान वर्ग –वैषमयपूर्ण स्थिति चिरंजीवी है; (ग) अगर इस यथार्थ की भीषण ाता में कुछ कमी की जा सकती है तो वह शासक की अच्छाई और उसके उदार दृष्टिकोण द्वारा ही सम्पन्न हो सकती है– (घ) इस विचारदारा के कारण आदर्श और यथार्थ के बीच अनुल्लंघ्य, अवांछनीय खाई पड़ जाती है।'

'प्रसादजी की सभ्यता – समीक्षा के दो दोष रह गये – (1) सभ्यता–समीक्षा एकांगी है,उसने केवल ह्रास को देखा, जनता की विकासमान उन्मेषशाली शक्तियों को नहीं देखा। (2) उनकी आलोचना अवैज्ञानिक है, वह समाज के मूल द्वंद्वों को नहीं पहचानती, मूल विरोधों को नहीं देखती। वह उन मूल कारणों और उसकी प्रक्रिया से उत्पन्न लक्षणों को एक साथ ही रखती है।–

जयशंकर प्रसाद पर विचार करते समय बार–बार साहित्यिक रूढ़िवाद हमारे आड़े आता है। साहित्यिक रूढ़िवाद से आधुनिक आलोचना को कैसे मुक्त किया जाए यह आज की सबसे बड़ी चुनौती है। साहित्यकार और कृतियों के मूल्यांकन के क्रम में सबसे पहल समस्या है आलोचना को कृति की पुनरावृत्ति से मुक्त किया जाय। इन दिनों आलोचना के नाम पर वह बताया जा रहा है जो कृति में लिखा होता है। कृति में व्यक्त भावबोध को बताना आलोचना नहीं है। कृतिकार ने जो लिखा है वही यदि बता दिया जाएगा तो यह आलोचना नहीं होगी, बल्कि कृतिकार के विचारों या कृति में व्यक्त विचारों की जीरोक्स कॉपी होगी।लेखक या कृति के विचारों की जीरोक्स कॉपी नहीं है आलोचना। यहां से हमें आलोचना के साथ मुठभेड़ करनी चाहिए।

आलोचना में रूढ़िवाद का दूसरा रूप है अवधारणाहीन लेखन। इस तरह का लेखन आलोचना के नाम पर खूब आ रहा है। मसलनु, "विमर्श" पदबंध को ही लें, इस पदबंध के प्रयोग को लेकर नामवर सिंह से लेकर उनके अनेक अनुयायी आलोचकों ने इस पदबंध पर विगत दो दशकों में जमकर हमले किए हैं और इस पदबंध को उत्तर–आधुनिकतावाद पर हमले के बहाने निशाना बनाया है। इस प्रसंग में उनके सभी तर्क शास्त्रहीन और अवधारणाहीन रूप में व्यक्त हुए हैं।

ब्रजभाशा से शुरू की, किंतु समय की माँग को देखते हुए खड़ी बोली में काव्य सृजन किया। बाद में छायावादी युग के प्रवर्तक के रूप में स्थापित हुए, जिसे आपके ही नाम पर 'प्रसाद युग' की संज्ञा दी गई है। इस अवधि में भारत में स्वतंत्रता की क्रांति चरम पर थी। ऐसे कठिन समय में प्रसाद ने अपने नाटकों के माध्यम से भारतीय जनमानस में ऊर्जा का संचार किया है। छायावादी युगीन नाटकों की प्रमुख विशेषताएं 'ध्रुवस्वामिनी' एवं 'चंद्रगुप्त' में विद्यमान हैं–

- नाटकों के गीतों में कवि की कोमल भावनाओं की मधुर अभिव्यक्ति है।
- नाटकों के समस्त गीत सामाजिकों के अंतःकरण को अनुरंजित करने में पूर्ण समर्थ हैं।
- नाटकों के गीतों में गेयता और माधुर्य की प्रधानता है।
- नाटकों में गीत प्राकृतिक पृश्ठभूमि पर बड़े ही सुंदर ढंग से समाहित किए गए हैं।
- दोनों नाटकों के गीत राष्ट्रीयता की भावनाओं से ओतप्रोत हैं।
- नाटकों के गीत सांस्कृतिक चेतना के प्रतीक हैं।

भारत में पितृसत्तात्मक समाज है। इस पितृसत्तात्मक समाज में धर्म, वर्ग, जाति, लिंग के आधार पर स्त्री को दोयम दर्जे की प्राणी समझा जाता रहा है। वर्तमान में भी स्त्री स्थिति कुछ हद तक वही है। स्त्री अपनी शिक्षा, इच्छा, अधिकारों और सम्मान के प्रति सजग होने के बावजूद सदैव समझौता वादी दृष्टिकोण अपनाने के लिए मजबूर थी। इन समस्याओं को जयशंकर प्रसाद ने अपने हृदय में महसूस किया और नाटक चंद्रगुप्त (1931) तथा ध्रुवस्वामिनी (1933) लिखकर प्रकाशित किया। इन नाटकों का मूल उद्देश्य नारी स्वातंत्र्य की चेतना को अभिव्यक्ति प्रदान कराना है। जयशंकर प्रसाद ने रंगमंच पर अभिनय के समय प्रगीतों का विशेष ध्यान आकर्षण किया है। प्रसाद जी ने नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' को 3 अंकों में विभक्त किया है। लेखक ने अपनी बात को राष्ट्र प्रेमी की तरह ही स्त्री वेदना को मंदाकिनी के माध्यम से मुखरित किया है। मंदाकिनी कहती है कि जो राजा राष्ट्र रक्षा करने में असमर्थ है, उस राजा की भी रक्षा नहीं करनी चाहिए। चंद्रगुप्त एवं ध्रुवस्वामिनी राष्ट्र तथा स्त्री की रक्षा के लिए शकराज के दुर्ग जाते हैं, तब मंदाकिनी की करुणा छलक पड़ती है–

''यह कसक अरे आँसू सह जा, बनकर विनम्र अभिमान मुझे, मेरा अस्तित्व बता, रह जा। बन प्रेम छल कोने–कोने, अपनी नीरव गाथा कह जा।''[1]

नाटक दृश्य काव्य है। अतः नाटक प्रेमियों की मनोभावनाओं को दृष्टि में रखते हुए नाटककार ने यत्र–तत्र प्रगीतों का प्रयोग किया है। ध्रुवस्वामिनी आत्मसम्मान और कुल की मर्यादा की रक्षा के लिए चंद्रगुप्त और सामंतों के साथ शकराज के शिविर में जा रही है।

मंदाकिनी अग्र लिखित गीत को प्रयाण गीत (Marching Song) के रूप में गाते हुए आगे–आगे चल रही है। यह गीत कर्म और विजय रथ पर विपरीत परिस्थितियों में भी आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है–

''पैरों के नीचे जल धर हों, बिजली से उनका खेल चले। संकीर्ण कगारों के नीचे, शत–शत झरने बेमेल चलें। विचलित हो अंचल न मौन रहे, निष्ठुर श्रृंगार उतरता हो, क्रंदन कंपन न पुकार बने, निज साहस पर निर्भरता हो।।''[2]

शकराज को ध्रुवस्वामिनी के आने का संकेत मिल चुका है। इस पर मानो वह विजय उत्सव मना रहा है। मदिरा का दौर चल रहा है। सांध्यकालीन प्रकृति मादकतापूर्ण बिंब की उपस्थिति का एहसास करा रही है। जय शंकर प्रसाद के गीतों का साहित्यिक महत्व तो है ही, साथ ही संक्षिप्तता, परिस्थिति की अनुकूलता और हृदय की अभिव्यक्ति की छटा दिखाई देती है। शकराज के महल में यह अंतिम गीत नर्तकियों द्वारा गाया गया है–

''अस्तांचल पर युवती संध्या की, खुली अलक घुँघराली है।
लो मानिक मदिरा की धारा, अब बहने लगी निराली है।
वसुधा मदमाती हुई उधर, आकाश लगा देखा झुकने,
सब झूम रहे अपने सुख में, तूने क्यों बाधा डाली है।''[3]

जयशंकर प्रसाद कृत नाटक 'चंद्रगुप्त' 4 अंको में विभक्त है। संपूर्ण नाटक में यथा स्थान 11 गीतों का समावेश किया गया है। चंद्रगुप्त नाटक का आरंभ तक्षशिला के गुरुकुल से होता है। इस नाटक में मुख्य पात्र चंद्रगुप्त और चाणक्य महत्वपूर्ण भूमिका में हैं। ग्रीक दार्शनिक सेल्यूलस की पुत्री कार्नेलिया सिंध नदी के तट पर प्राकृतिक मनोहारी वातावरण में डूब सी जाती है। वह भारतीय संगीत में गीत गाती है–

''अरुण यह मधुमय देश हमारा।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरल तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरु सिखा मनोहर।
उड़ते खग जिस ओर मुँह किए, समझ नीड़ निज प्यारा।''[4]

गुप्त काल में युद्ध प्रायः साम्राज्य विस्तार के लिए होते थे। इसलिए युद्ध में प्रस्थान से पहले सैनिकों का मनोबल और उत्साह बढ़ाने के लिए तक्षशिला की राजकुमारी 'अलका' अपने देशवासियों से विजय उत्सव मनाने आह्वान करती है। आज संपूर्ण देश में जातिवाद, प्रांतीयवाद आदि अनेकानेक समस्याएं पनप रही हैं। इस संदर्भ में नाटक 'चंद्रगुप्त' में जय शंकर प्रसाद ने नारी पात्रों के माध्यम से राष्ट्रीय भावना को आर्य संस्कृति की ठोस जमीन प्रस्तुत की है। नारी अलका समवेत स्वर में गायन करती है–

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से,
प्रबुद्ध शुद्ध भारती–
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला
स्वतंत्रता पुकारती–
अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो।
प्रशस्त पुण्य पंथ है– बढ़े चलो, बढ़े चलो।''[5]

भाषा को सुसज्जित एवं प्रभावपूर्ण बनाने के लिए छायावादी कवि, लेखक जयशंकर प्रसाद ने यत्र–तत्र समुचित अलंकारों का प्रयोग किया है। 'चंद्रगुप्त' नाटक के गीतों में उपमा, अनुप्रास, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का समावेश मिलता है। अलंकारों के प्रयोग से गीतों का सौंदर्य बढ़ जाता है क्योंकि अलंकार काव्य का वाह्य सौंदर्य होता है–

''सुधा सीकर से नहला दो।
रूप शशि इस व्यथित हृदय–सागर को बहला दो।
अंधकार उजला हो जाए,
हँसी हंसमाला मंडराये।''[6]

छायावादी काव्य की एक अनुपम विशेषता है– उसकी चित्रमयता अथवा चित्रात्मक भाषा। छायावादी काव्य हिंदी वांग्मय में अपना सर्वस्व समाहित कर देता है। चंद्रगुप्त नाटक के गीतों में भी कुछ ऐसे ही गीत हैं जिन्हें पढ़ने से पहले ही नया चित्र मन में उभर आता है–

''पड़ रहे पावन प्रेम–फुहार,
जलन कुछ–कुछ है मीठी पीर।
सँभाले चल रही है कितनी दूर,
प्रलय तक व्याकुल हो न अधीर।''[7]

छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषता प्रतीकात्मकता होती है। प्रतीकों के माध्यम से कवि बहुत कुछ कह जाता है। जिसका संबंध सीधा–सीधा मानव जीवन से जुड़ा होता है। ऐसे ही प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग जयशंकर प्रसाद ने चंद्रगुप्त नाटक में किया है। नाटक में नारी मल्लिका, सरोजिनी, अलि (चंद्रगुप्त) प्रतीकों के माध्यम से प्रकृति से जोड़ा गया है, जिसमें मानवीकरण भी परिलक्षित होता है–

''हो मल्लिका, सरोजिनी या यूथी का पुंज। अलि को केवल चाहिए, सुखमय क्रीड़ा कुंज। मधुप कब एक कली का है।''[8]

जयशंकर प्रसाद के नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' तथा 'चंद्रगुप्त' के गीत सरल सरस और रंगमंच के अनुकूल हैं। सम्पूर्ण नाटक में गद्य की अविरल धारा परिस्थिति के अनुकूल संगीत सरसता उत्पन्न करती है। नाटककार जयशंकर प्रसाद जी प्रस्तुत नाटक के पात्रों को मनोदशा तथा उनके हृदय की गतिविधि को गीतों के माध्यम से प्रकट करते हैं। इससे स्पष्टतः हम कह सकते हैं कि प्रसाद जी कविता लिखते–लिखते नाटक तथा नाटक लिखते–लिखते कविता लिख देते हैं। यही उनकी साहित्य साधना का सार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. ध्रुवस्वामिनी– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 13, प्रकाशन– साहित्य रत्नालय कानपुर, प्रकाशन वर्ष 2008
2. ध्रुवस्वामिनी– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 22, प्रकाशन– साहित्य रत्नालय कानपुर, प्रकाशन वर्ष 2008
3. ध्रुवस्वामिनी– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 25, प्रकाशन– साहित्य रत्नालय कानपुर, प्रकाशन वर्ष 2008
4. चंद्रगुप्त– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 67, प्रकाशन– प्रकाशक संस्थान दरियागंज नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2014
5. चंद्रगुप्त– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 126, प्रकाशन– प्रकाशक संस्थान दरियागंज नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2014
6. चंद्रगुप्त– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 114, प्रकाशन– प्रकाशक

संस्थान दरियागंज नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2014
7ण चंद्रगुप्त– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 44, प्रकाशन– प्रकाशन संस्थान दरियागंज नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2014
8ण चंद्रगुप्त– जयशंकर प्रसाद पृष्ठ संख्या 120, प्रकाशन– प्रकाशक संस्थान दरियागंज नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष 2014
9ण जयशंकर प्रसाद महानता के आयाम , डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2022